देवदारु

हज़ारीप्रसाद द्विवेदी

'आचार्य हज़ारीप्रसाद द्विवेदी' हिन्दी के शीर्षस्थ साहित्यकारों में से हैं। वे उच्चकोटि के निबंधकार, उपन्यासकार, आलोचक, चिन्तक तथा शोधकर्ता हैं। 'देवदारु' आचार्य हज़ारीप्रसाद द्विवेदी जी द्वारा रचित एक ललित निबंध है। इस निबंध का मुख्य आधार देवदारु वृक्ष है। द्विवेदी जी का मानना है कि देवदारु पेड़ कोई सामान्य पेड़ नहीं है बल्कि यह देवताओं का प्यारा वृक्ष है। इस वृक्ष का नाम जो है आज का नाम नहीं है, यह नाम महाभारत से भी प्राचीन है। कालिदास से भी पुराना है।

द्विवेदी जी का कहना है कि देवदारु वृक्ष की ऊँचाई के कारण इसे गगमस्पर्शी भी कहा गया है। ये बहुत ऊँचे और लंबे होते हैं। इसकी लंबाई को देखकर ही ऐसा प्रतीत होता है कि मानो ये आसमान को छूने का प्रयास कर रहे हैं। इसकी जड़ें बहुत गहरी होती हैं। ये पहाड़ी प्रदेश में अधिक पाया जाता हैं।

द्विवेदी जी कहते हैं कि ये पेड़ देवताओं का प्यारा इसीलिए हैं कि महादेव ने समाधि लगाने केलिए इसे ही पसंद किया था। देवदारु उल्लास, खुशी या प्रसन्नता का प्रतीक है। प्रेम का देवता कामदेव ने शिवजी की समाधि भंग करने का प्रयास किया था और वे समाधि भंग करने में सफल भी हुए, लेकिन देवदारु का वृक्ष अचल खड़ा रहा। यानी परिस्थितियाँ बिल्कुल विपरीत थी फिर भी उसका प्रभाव देवदारु पर नहीं पड़ा। यह पेड़ हमेशा अपने स्थान पर अचल, अडिग खड़ा रहा है, बीते हुए समय से आज तक निरंतर, बिल्कुल निर्विकार रूप से। इसी कारण से 'देवता का काठ' (देव-दारु) कहा गया होगा।

लेखक आगे कहते हैं कि महादेव और पार्वति के प्रणय प्रसंग को देखते रहने के कारण देवदारु महावृक्ष न बन सका। महावृक्ष तो ऐसी वनस्पति होते हैं जो फल देते हैं। लेकिन देवदारु फल प्रदान नहीं करता और जो फल इसमें लगते भी हैं वे खाने योग्य नहीं होते। वनस्पति के इस गुण से रहित हो जाने के कारण देवदारु महावृक्ष नहीं बन पाया।

VTM NSS COLLEGE LIBRARY

देवदारु का पुराना नाम है देवतरु। इसका मतलब देवता का तरु नहीं बल्कि यह देवता भी है और तरु भी। देवता के रूप में छंद है और तरु के रूप में अर्थ। लेखक यह बताना चाहते हैं कि देवदारु का चमत्कारिक महत्व भी है। इस संबन्ध में वे एक प्रसंग सुनाते हैं कि उन्होंने अपने गाँव में एक भूत भगानेवाले पंडित को देखा है। इस पंडितजी ने लेखक को एक कहानी भी सुनाई थी कि एक बार पंडितजी रात को घोर अंधकार में सुनसान बगीचे से गुज़र रहे थे तो उन्होंने घोडे पर सवार एक मुड़कट्टा भूत देखा, पंडितजी हारनेवाले नहीं थे। उन्होंने गायत्री मंत्र और देवदारु की लकड़ी की सहायता से भूत को अपने अधीन कर लिया। इस प्रकार लेखक ने देवदारु का महत्व स्थापित किया है।

लेखक देवदारु की विशेषताओं को गिनाते हुए कहते हैं कि देवदारु तो वहम और भ्रान्तियाँ दूर करनेवाला है। देवताओं का दुलारा और महादेव का प्यारा है। द्विवेदीजी देवतारु के अलग- अलग किस्मों के बारे में भी कहते हैं जैसे कि खूसट, पाधा, सूम, सनकी, झबरैला, चपरगेंगा, गदरौना, खिटखिटा, झक्की, झुमरैला, धोकरा, नटखटा, चुनमुन, बाँकुरा, चौरंगी। हर देवतारु का अपना आकार है, व्यक्तित्व है। एक देवतारु तो चाहने योग्य इतना सुन्दर था कि महादेव ने उसे अपना पुत्र मान लिया और माता पार्वती की छाती से दूध लपक पड़ा।

देवतारु की खूबियों का बयान करते हुए द्विवेदी कहते हैं कि देवतारु धरती से रस खींचकर जीवन लेता है और आकाश को स्पर्श करना चाहता है। उसके झूमने में एक मस्ती है। इस मस्ती में युग- युगान्तर की संचित अनुभूति है। समय के उतार चढ़ाव का वह निर्मम साक्षी है । ऐसा प्रतीत होता है कि ये पेड़ अपनी टहनियों को फैलाकर संसार को बुला रहा है कि तुम्हारी रक्षा के लिए मैं खड़ा हूँ। झूमते मुस्कुराते वह कह रहा है कि मैं सब जानता हूँ, कुछ भी मुझसे छिपा नहीं है।

लेखक इस निबन्ध के माध्यम से यह बताना चाहते हैं कि समय चाहे कितना भी बदला हो, देवदारु के पेड़ ने अपना व्यक्तित्व कभी नहीं बदला। हज़ारों वर्षों के उतार- चढ़ाव को सहकर भी अडिग खड़ा है। मानव को भी विपरीत परिस्थितियों में ऐसे ही अटल और स्थिर रहना चाहिए। मानव की पहचान उसकी जाति के आधार पर नहीं उसके गुणों के आधार पर होनी चाहिए। देवतारु का अपना

VTM NSS COLLEGE LIBRARY

अस्तित्व है वैसे ही हरेक व्यक्ति का अपना अलग अस्तित्व है। हर व्यक्ति को स्वाभिमान के साथ जीना है।

देवदारु - संदेश

देवदारु आचार्य हज़ारीप्रसाद द्विवेदी जी द्वारा रचित एक ललित निबंध है जिसमें लेखक ने महादेव के प्रिय वृक्ष देवदारु की विभिन्न विशेषताओं का वर्णन किया है। लेखक के मतानुसार देवदारु वृक्ष मानव जाति को गुणवत्ता का संदेश देता है। वस्तुतः देवदारु निबंध का मुख्य उद्देश्य देवदारु वृक्ष की उन विशेषताओं का वर्णन करना है जो मानव जाति के लिए उपयोगी है।

लेखक के अनुसार मनुष्य को देवदारु वृक्ष की भाँति अपने स्थान पर अटल रहना चाहिए। कठिन परिस्थितियों के कारण घुटने टेकना नहीं चाहिए। मनुष्य को समाज के साथ आत्मसाथ करके चलना चाहिए। लेखक के अनुसार 'अलग' प्रतीक है - 'अ-लग' का अर्थात जो न लगे। अलगाव पृथकत्व बुद्धि का नाम है, जिसमें 'मैं पन' है, 'अहंकार' है।

देवदारु यही संदेश देता है कि हमें काल्पनिक बातों से डरना नहीं चाहिए। लेखक भूत के विषय में लिखते हैं कि मन में आत्मविश्वास जागृत करो, भूत की पिटाई करो, तब वह कह उठेगा कि फिर उससे गलती नहीं होगी, और वह हमारा गुलाम बनेगा।

एक महत्वपूर्ण संदेश यह भी मिलता है कि मनुष्य को जाति या वंश से नहीं बल्कि उसके व्यक्तित्व से पहचानना चाहिए। देवदारु वृक्ष की भाँति इस मृत्युलोक से जीवन शांति ग्रहण करो, रस प्राप्त करो और चेष्टा करो ऊपर बढ़ने की। ऊँचे उठने का मार्ग है - ध्यान, धारणा और समाधि। साथ ही पृथ्वी पर दूसरों को अभयदान दो, जियो और जीने दो।

इस प्रकार देवदारु वृक्ष कठिनाइयों का सामना करने, अपने सिद्धांतों पर अटल रहने, निरंतर गतिमान रहने, ज़मीन से जुडे रहने, ऊँचे उठने, सबका कल्याण करने, पर्यावरण की सुरक्षा करने तथा मानवता का कल्याण करने केलिए सदैव तत्पर रहना सिखाता है।

VTM NSS COLLEGE LIBRARY

बेटी का विवाह

अमृतराय

कथा सम्राट प्रेमचंद के पुत्र अमृतराय हिन्दी का प्रसिद्ध रचनाकार हैं। उन्होंने मुंशी प्रेमचंद की जीवनी लिखी थी जो 'कलम का सिपाही' शीर्षक से प्रकाशित हुई थी। इस जीवनी का एक रोचक अंश प्रेमचंद की बेटी के विवाह से संबन्धित है। इसे पढ़ने पर प्रेमचंद की प्रगतिशील दृष्टि और आधुनिक संवेदनाओं का पता चलता है।

लड़की सयानी होती तो उसकी शादी के बारे में समाज ज़्यादा चिंतित होता है। अगर वह स्कूल या कॉलिज में पढ़ती है तो समाज ज़्यादा चिंतित नहीं होता। लेकिन मुंशीजी की बेटी को स्कूल या कॉलिज की पढ़ाई का सुयोग नहीं मिला या नहीं दिया गया। कुछ रोज़ लखनऊ के आर्य महिला विद्यालय में गयी। मगर फिर वहाँ से छुड़ा लिया गया। उस वक्त लड़की को पढ़ाना अपने आप में एक क्राँति थी। प्रेमचंद भी शायद इस क्राँति केलिए तैयार न थे। उनके जीवन की परिस्थितियाँ भी काफी अव्यवस्थित थीं। सरकारी नौकरी से इस्तीफा देते समय मुंशीजी ने सोचा था कि शांति से घर बैठेंगे, लिखेंगे-पढ़ेंगे और देश सेवा करेंगे। लेकिन शुरू से ही गरीबी ने उस परिवार को पूरी तरह बाँध दिया था। इसके अलावा उनकी पत्नी बराबर बीमार रहती थी। ऐसी हालत में बच्चों की पढ़ाई मुश्किल थी। फिर भी बेटों की पढ़ाई ज़ारी की। लेकिन घर के काम- काज में लगाये रखने के कारण बेटी की पढ़ाई वहीं खतम हुई।

लड़की की शादी को लेकर मुंशीजी के मन में चिंता हुई। उन्होंने एक दोस्त के द्वारा अपने बिरादरी का लड़का वासुदेव से बेटी का रिश्ता तय करने की कोशिश की। उन्होंने वासुदेव की बहनोई दशरथलाल को खत लिखकर रिश्ते की बात पक्की कर ली। वासुदेव के पिता मुंशी भवानीप्रसाद प्रेमचंद की तरह प्रगतिशील दृष्टि रखनेवाले थे। वे बड़े धार्मिक व्यक्ति थे। म्युनिसपिल्टी के उप- सभापति थे, आनरेरी मजिस्ट्रेट थे और आर्म्स ऐक्ट से मुस्तसना थे यानी उनको हथियार रखने की आज़ादी थी। सन् 1905 के बंगभंग आन्दोलन में भी वे सजीव थे। उस वक्त अंग्रेज़ों ने राजद्रोह के नाम पर उन पर मुकदमा चलाया और आखिर जीत भवानीप्रसाद की ही हुई थी।

VTM NSS COLLEGE LIBRARY

प्रेमचंद की बेटी की शादी का दिन आ गया। सबेरे आठ बजे ही बनारस के स्टेशन पर बारात पहुँच गयी। वहाँ से लमही पहुँचते- पहुँचते शाम हो गयी, क्यों कि रास्ता बहुत खराब थी। जनवासा स्कूल में दिया गया था। द्वार पूजा मुंशीजी ने नहीं की, उनके बड़े भाई बलदेवलाल ने किया। उनकी पत्नी ने उन से कहा कि आखिर कन्यादान तो उनको करना ही होगा। मगर कन्यादान का अवसर आया तो मुंशीजी अपनी जगह से उठकर नहीं आये। बहुत समझाया गया, फिर भी नहीं आये। अंत में उनकी पत्नी को कन्यादान करना पड़ा। विवाह के समय जो रस्में निभाना था, उन पर मुंशीजी को बिलकुल विश्वास नहीं था। उनकी दृष्टि में बे-जान चीज़ों को दान देते हैं, जानदार चीज़ों में तो सिर्फ गाय का दान होता है। इसलिए वे अपनी बेटी का कन्यादान करने को तैयार नहीं हुए।

अमृतराय द्वारा लिखित जीवनी का यह अंश प्रेमचंद को पक्का सिद्धांतवादी और राष्ट्रीय विचारों वाले लेखक के रूप में स्थापित करता है जो निजी जीवन में भी अपने सिद्धांतों के लिए कोई समझौता करने को तैयार नहीं।

बडौदा का अनुभव

डॉ. अम्बेडकर

डॉ. बाबसाहब अम्बेडकर जी का जन्म 14 अप्रैल 1891 को मध्यप्रदेश के महु नामक स्थान पर हुआ। आपका पूरा नाम भीमराव रामजी अम्बेडकर था। डॉ. अम्बेडकर द्वारा रचित आत्मकथा का अंश है 'बड़ौदा का अनुभव'। इसमें उन्होंने अपने बड़ौदा के अनुभव का मार्मिक चित्रण किया है। भारत के अछूतों की स्थिति को यह आत्मकथा अंश उजागर करता है।

बड़ौदा के महाराज ने डॉ. अम्बेडकर को उच्च शिक्षा के लिए अमरिका भेजा था। न्यूयर्क के कोलंबिया पीठ में उन्होंने अध्ययन किया। फिर लंदन विद्यापीठ के अर्थशास्त्र विषय में स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम में प्रवेश लिया। लेकिन इसे अधूरा छोड़कर उन्हें भारत लौटना पडा। बड़ौदा महाराज ने शिक्षा के लिए उनकी मदद की थी। इसलिए उनके राज्य में नौकरी करना उनके लिए आवश्यक था। अत: वे सीधे बड़ौदा गये। लेकिन एक अछूत होने के कारण उन्हें बड़ौदा में रहने केलिए कोई भी जगह

VTM NSS COLLEGE LIBRARY

नहीं मिली। अंत में एक ताँगेवाले से उन्हें मालूम हो गया कि शहर में एक पारसी सराय है जहाँ यात्रियों के रहने की व्यवस्था है। यह बात सुनकर उन्हें थोड़ी राहत मिली।

पारसी जोरेस्टर धर्मावलंबी होने के कारण अस्पृश्यता को नहीं मानते। इसलिए बड़ी आशा से अम्बेडकर जी अपना सामान ताँगे में रखे और चल दिया। एक अधेड़ पारसी उस सराय की देखभाल करता था। वहाँ पहुँचते ही पारसी ने कमरा दिखाया। थोड़ा आराम करने के विचार से वे कपड़े बदले। तब तक वह पारसी हाथ में रजिस्चर लेकर आया। पारसी की वेशभूषा में उन्हें न देखकर उसने ज़ोर से कहा कि वह सराय केवल पारसियों के लिए है। इसकी जानकारी न होने के कारण अम्बेडकर जी ने कहा कि वे हिन्दू हैं और वह चाहे तो रजिस्टर में उनका कोई झूठा पारसी नाम लिख सकता है। उन्होंने यह कहकर उस पारसी को ललचाया कि वहाँ और कोई ग्राहक नहीं रहता, इसलिए उन्हें वहाँ रखने से उसका ही फायदा होगा।

उन्होंने रोज़ डेढ़ रुपया देने तथा पारसी के नाम से रजिस्टर में लिखने का प्रस्ताव भी रखा। पारसी इस बात को मान लिया तो उन्हें इस समस्या से छुटकारा मिला।

बड़ौदा स्टेट के एकउंटेंट जनरल के कार्यालय में प्रशिक्षणार्थी की हैसियत से अम्बेडकर जी की नियुक्ति हुई थी। कार्यालय जाने केलिए वे दस बजे सराय से निकलते थे और शाम को आठ बजे तक मित्रों के साथ समय बिताते थे। इस तरह वे सराय में जल्दी न लौटने की कोशिश करते थे। सराय की स्थिति बहुत दयनीय थी। लेकिन कहीं और स्थान न मिलने के कारण उन्हें वहीं रहना पड़ा। जिस इमारत पर सराय था उसके ऊपर की मंजिल पर भोजनालय था जहाँ अम्बेडकर जी अकेले रहते थे। वहाँ एक दिये की व्यवस्था भी नहीं थी। पारसी व्यवस्थापक शाम होते ही एक लालटेन लाकर रखता था लेकिन इसका प्रकाश बहुत कम था। उन्हें वह कमरा आँधेरी कोठरी लगती थी। वहाँ उन्हें बात करने केलिए भी कोई नहीं था। भयावह एकाकीपन से बचने केलिए उन्होंने पुस्तकों को साथी बनाया।

सराय में रहने के ग्यारहवाँ दिन सुबह जब अम्बेडकर जी तैयार होकर कार्यालय जानेवाले थे तब कुछ लोग हाथ में लाठियाँ लेकर आये और पारसियों की सराय को अपवित्र करने का आरोप लगाकर उन्हें धमकी देने लगे। अम्बेडकर जी ने

VTM NSS COLLEGE LIBRARY

एक सप्ताह वहाँ रहने देने की प्रार्थना की तो उन लोगों ने उसी दिन शाम तक सराय छोड़ने का अंतिम आदेश दिया। संस्थान का बंगला मिलने तक रहने केलिए कोई अस्थायी व्यवस्था करने के विचार से उन्होंने अपने एक हिन्दू मित्र की मदद माँगी तो उस मित्र ने कहा कि यदि वह उन्हें अपने घर में रखेगा तो उसके नौकर भाग जायेगा। फिर वे अपने एक धर्मान्तरित क्रिश्चियन मित्र के पास गये जिसने पहले भी उन्हें अपने साथ रहने का निमंत्रण दिया था। लेकिन उसने भी कोई बहाना बनाकर उन्हें टाल दिया।

बड़ौदा में डॉ.अम्बेडकर को कहीं भी रहने का जगह नहीं मिला और उन्हें सराय भी छोड़ना था। इसलिए अन्त में उन्होंने बंबई लौटने का निर्णय लिया। ऐसी बेचैन अवस्था में उन्हें अपने माता- पिता की याद आई। वे बड़ी आशा से बड़ौदा गये थे, किन्तु केवल ग्यारह दिन रहने के बाद मजबूरन उन्हें बड़ौदा छोड़ना पड़ा। इस घटना से उन्हें यह बात मालूम हो गया कि जो आदमी हिन्दुओं केलिए अछूत है, वह पारसियों के लिए भी अछूत है।

मेरा हमदम मेरा दोस्त: कमलेश्वर

राजेन्द्र यादव

राजेन्द्र यादव हिन्दी के सुपरिचित लेखक, कहानीकार, उपन्यासकार तथा आलोचक होने के साथ साथ हिन्दी के सर्वाधिक लोकप्रिय संपादक भी थे। नयी कहानी के नाम से हिन्दी साहित्य में उन्होंने एक नयी विधा का सूत्रपात किया। नयी कहानी आन्दोलन के तीन कथाकार थे राजेन्द्र यादव, मेहन राकेश और कमलेश्वर। इन तिनों के बीच गहरी दोस्ती थी। इन तीनों कहानीकारों ने एक दूसरे पर संस्मरणों की शृंखला लिखी जो 'मेरा हमदम मेरा दोस्त' शीर्षक से प्रकाशित हुई। इस शृंखला में राजेन्द्र यादव का कमलेश्वर पर लिखा गया संस्मरण है 'मेरा हमदम मेरा दोस्त: कमलेश्वर'। कमलेश्वर के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को समझने में यह संस्मरण सहायक है।

कमलेश्वर का परिचय देते हुए राजेन्द्र यादव कहते हैं कि वे मिस्चीवियस हैं। शुद्ध उच्चारण, साफ और तराशी हुई संतुलित आवाज़, बातों को निहायत प्रभावकारी तरीके से

VTM NSS COLLEGE LIBRARY

कहने की कला, पतले-पतले होंठ, तीखे और फोटोजनिक नक्श, साँवला रंग और शातिर आँखें उनकी विशेषताएँ हैं। छोटे कद के, साफ कुर्ता-पाजामा पहननेवाले कमलेश्वर देखने में मासूम लड़का जैसे थे। वे ज़िन्दादिल वार्तालापकर्ता भी थे तथा बहुत ही हाज़िर-जवाब, पुरमज़ाक, समझदार और तेज़ भी थे। वे अपने एक हाथ की उँगलियाँ खोल-खोलकर, मेज़ पर हाथ पटक-पटककर किसी ऐसी किताब, फिल्म, घटना, कहानी या चीज़ के बारे में सविस्तार, पूर्ण आत्मविश्वास से घंडों बातचीत करते थे जिसे उसने न पढा है, न देखा है और न उसके बारे में उसे कोई जानकारी है। झूठ बोलना उनकी आदत है और वे अपने एपॉइंटमेंट निभा नहीं पाते। घटनाओं को बढ़ा-चढ़ाकर नमक-मिर्च लगाकर सुनाना उनकी प्रिय हॉबी है। एक बार दिल्ली रेडियो के एक कार्यक्रम में भाग लेने के बाद भन्नाए हुए बाहर निकले एक जानेमाने कवि तथा भूतपूर्व आलोचक से कमलेश्वर ने घंटे भर केलिए उनका चेहरा उधार माँगा। उनके मकसद के बारे में पूछे जाने पर उन्होंने कहा कि जूते खाने को उनका मन करता है। इस तरह बहुत ही रोचक ढंग से बातचीत करके हालात को हल्का बनाने में माहिर हैं कमलेश्वर।

यथार्थवादी हाव-भाव, प्रभावशाली मुद्रा मूड, साफ सुथरी ज़बान, चरम आत्मविश्वास भरा लहज़ा और उसे अर्थ देने का व्यक्तित्व तथा वेश-भूषा यही कथाकार कमलेश्वर का परिचय है। असंभाव्य कहानी को यथार्थवादी जामा पहनाकर प्रस्तुत करने में वे माहिर हैं। नीली झील, तीन दिन पहले की रात, डाक-बंगला, एक सड़क: सत्तावन गलियाँ आदि कहानियाँ पढ़कर राजेन्द्र यादव कमलेश्वर की ज़बान पर मुग्ध हो गए।

लेखक का कहना है कि कमलेश्वर को बहुत आत्म-विश्वास, खूबसूरत ज़बान और सही हाव-भाव के साथ बात को कहने की कला आती है। वे संवेदनशील एवं ईमानदार व्यक्ति हैं। वे न तो दूसरों की भावनाओं के प्रति क्रूर हो पाता हैं, न अपने प्रति ग़ैर- ईमानदार। उनके लेखन की गहराई तथा संवेदना को निखारनेवाली आत्मा के तड़प को देखकर लेखक को कमलेश्वर पर ईर्ष्या होने लगती है। बाहरी और भीतरी कटुताओं ने कमलेश्वर के लेखन को निश्चित प्रगति और सान दी है। कमलेश्वर का कहना है कि खोखले सामंतवाद के माहौल में पलने के कारण तथा बचपन में पितृहीन हो जाने से उनमें एक जिम्मेदारी का अहसास आ गया है। कमलेश्वर लेखक- प्रकाशक बनकर अपना व्यक्तित्व खड़ा करना चाहता था।

कमलेश्वर सारे दिन किसी न किसी कार्य में लगे रहने के बवजूद भी सफल कहानियाँ कब लिख लेते हैं इस बात पर लेखक आश्चर्य प्रकट करते हैं। कमलेश्वर का कमरा

VTM NSS COLLEGE LIBRARY

जो है अच्छा- खासा वेटिंग रूम है यही लेखक का विचार है। उनके कमरे में हर वक्त कोई-न-कोई बैठा रहता है। कभी- कभी उनका कमरा धर्मशाला बन जाता है जहाँ खाना- कपड़ा से लेकर हजामत का सामान, जूता, जेब खर्च सब कुछ मिलता है। इस तरह खुद तंगी और तकलीफ में रहकर औरों को सुविधा जुटाने में कमलेश्वर का बडप्पन तृप्त होता है। उसी धर्मशाला बने अपने कमरे में यात्रियों के बीच इत्मीनान से औंधा लेटकर अपनी खूबसूरत हैंडराइटिंग में वे कहानियाँ लिखते थे। उनकी यह शांति और एकाग्रता लेखक को जलाकर खाक़ कर देती है। इसी तरह अपने कमरे में औरों के बीच रहकर कमलेश्वर ने मन्नू भण्डारी की 'नयी कहानियाँ' के विशेषांक केलिए कहानी लिखी थी जिसे देखकर लेखक दंग रह गये।

लेखक को यही आशंका हो रहा है कि इस तरह विचित्र विरोधाभासों की लड़ाई लड़ते लड़ते कमलेश्वर किसी दिन हार जायेंगे। कमलेश्वर को कम्यूणिस्ट घोषित करके बी.बी.सी. लंदन में मिलती नौकरी से हटाने की कोशिश भी की गयी थी। कमलेश्वर बहुत ही भावुक व्यक्ति हैं, लेकिन उनकी भावुकता बात- बात में बह निकलनेवाली गिलगिली भावुकता नहीं है। लेखक का कहना है कि कमलेश्वर अपने युग और अपनी पीढ़ी के सच बोलनेवाले हैं। उनके पास ज़बान है और उन्हें बात करना भी आता है। जहाँ बड़े बड़े ज़बानदार चुप हो जाते हैं वहाँ कमलेश्वर बोल लेते हैं। इस तरह कमलेश्वर का पूरा परिचय इस रेखाचित्र के द्वारा लेखक देते हैं।

सूखे सरोवर का भूगोल

मणि मधुकर

मणि मधुकर हिन्दी एवं राजस्थानी भाषा के प्रसिद्ध कवि और लेखक थे। इनका मूल नाम मनीराम शर्मा है। 'सूखे सरोवर का भूगोल' मणि मधुकर का एक रिपोर्ताज है जिसमें अकाल की मार सह रहे अपने गाँव के जीवन की रिपोर्ट लिखते हैं। इसमें ढह चुके सामंती जीवन का करुण चित्र, अभावग्रस्त जीवन से जूझ रहे लोगों में जीवन का राग और स्नेह आदि का चित्रण है।

मणि मधुकर अपने गाँव, वहाँ की भूप्रकृति, लोगों के जीवन, अंध विश्वास, जीवन को आगे बढ़ाने का संघर्ष आदि का परिचय देते हैं। अपने बचपन का मित्र सिराम के रूप का वर्णन करते हुए लेखक कहते हैं कि वे दोनों आठ-दस साल की उम्र में एक साथ ढांयलो

VTM NSS COLLEGE LIBRARY

खेलते थे। सिराम लेखक को पढ़ोसरी (पढ़ा-लिखा) पुकारता था। सिराम को रावले में चोरी करना अच्छा लगता था और पकड़े जाने पर उसकी खूब पिटाई होती थी। इसलिए वह लेखक से बड़े होकर थानेदार बनने को कहता था ताकि वह वहाँ पर खूब चैन कर सके और उसे तंग करनेवालों से प्रतिशोध ले सके। वह लेखक की पत्नी के साथ भी अच्छी तरह हिल-मिल गया और अपनी तीसरी पत्नी से उन्हें मिलाया।

लेखक का कहना है कि बरसों तक सूखे की हालत रहने के कारण गाँव खाली हो जाता है। अपनी जान बचाने की इच्छा से लोग कुनबे की चिंता छोड़कर रोज़ी-रोटी की तलाश में कहीं चले जाते हैं। इस तरह घर-बार छोड़कर गरीब लोग जाते हैं तो उसे ‘मऊ’ जाना कहा जाता है और संपन्न बनिये- ब्राहमण कमाने केलिए बड़े शहरों में जाते हैं तो उसे ‘दिसावर’ जाना कहते हैं। इस तरह ‘मऊ’ में गयी जुगली नामक औरत और उसके पति नेवगिया का परिचय भी लेखक ने रोचक ढंग से दिया है। जुगली जगह- जगह फिरी और कई बाबुओं की प्यारी रही। जो बच्चे उनसे पैदा हुए उन्हें वहीं छोड़ दिये। अन्त में वह गाँव लौट आयी और नेवगिया के साथ जीवन बिताने लगी। नब्बे साल से अधिक उम्रवाले दूले खाँ की शादी और उसकी बुढ़िया पत्नी की मौत आदि का वर्णन भी रोचक ढंग से किया गया है।

लेखक कहते हैं कि ख़रिया बास में कभी मेंढक नहीं बोलते, मतलब वहाँ बारिश नहीं होती। वहाँ की रहनेवाली साठ साल से भी अधिक उम्रवाली धापली धिराणी, अपने पति के मरने के बाद अपशकुनी हो गयी और उसके बारे में कई डरावनी अफवाहें फैलाई जाने लगी। इस तरह लोग उससे दूर रहने और उसे डायन कहने लगा। एक बार लेखक ने उसे कीचड़ खाते देखा और उनके पूछने पर उसने कहा कि वह दूध- दलिया खा रही है। उसने अठारह बच्चों को जन्म दिया था और सभी ज़िन्दा भी हैं, फिर भी उसकी यही हालत है। यही धिराणी बाद में मेले लग जाने पर लेखक को पास बुलाकर दस पैसे का सिक्का देकर शक्करपारे खाने को कहा। उसके प्यार को देखकर लेखक की आँखें भर गयीं।

बरसात ठीक मिलने पर फसल अच्छा होता था। थोड़ा बहुत माजरा सबके घर में होता था तो डाकुओं के छीनकर चले जाने का डर रहता था। डाकुओं के आने की खबर पाते ही स्त्री-पुरुष मैदान में निकल आते थे और बच्चों को छतों पर फेंक दिया जाता था ताकि वे सुरक्षित रहें। डाकुओं के आने पर खून-खच्चर तथा लूटपाट होता था और डाकू लोग अन्न का एक चिहन तक नहीं छोड़ते थे। कभी- कभी हाकमें की जीपें भी औरतों की टोह में आती

थी। इस तरह के अपने गाँव को लेखक निर्लज्ज और निर्जीव ज़मीन कहते हैं जिसे न कुछ पा लेने का संतोष है और न खो देने का दर्द। अकाल पड़ता है, धरती कुछ नहीं देती और ऐसे में आदमी अपने से अलग और किसी का भी खयाल नहीं कर पाता। सास, ससुर, पति, बच्चे सबके सो जाने पर बीस रोज़ की भूखी पत्नी उठकर कहीं चल देती है। पिता किसी गड्ढे में बचा हुआ धान झुपा लेता है पर अपने बच्चों को एक दाना तक नहीं देता। इस तरह लेखक इस रिपोर्ताज के द्वारा अपने गाँव का यथार्थ चित्र हमारे सामने प्रस्तुत करते हैं जो वहाँ की प्रकृति, जीवन, संघर्ष आदि सभी बातों का परिचय देता है।

निंदा - रस

हरिशंकर परसाई

हरिशंकर परसाई हिन्दी के महान गद्यकारों में एक हैं। मनुष्य जीवन से संबन्धित सभी विषयों पर उन्होंने लिखा है। परसाई के द्वारा रचित निबंध 'निंदा-रस' एक व्यंग्य प्रधान रचना है जिसमें वे मनुष्य में निन्दा नामक जो प्रवृत्ति है उसका उपहास उड़ाते हैं। इसके द्वारा लेखक समाज में व्याप्त निंदा नामक बुराई से मनुष्य को दूर रहने की प्रेरणा देते हैं।

लेखक के अनुसार निंदा करना या किसी की निंदा सुनना अच्छी बात नहीं है। इससे मनुष्य अपनी विश्वसनीयता खो देता है और परस्पर वैर भाव उत्पन्न हो जाता है। इस बात को स्पष्ट करते हुए लेखक बताते हैं कि उनका 'क' नामक एक मित्र है जो बहुत दिनों के बाद उनसे मिलने आता है। लेखक से मिलने से पहले उनका यह मित्र 'ग' से मिलकर दो- तीन घण्टे लेखक की निंदा करता रहा इस बात का उन्हें पहले ही पता चल चुका था। इसलिए 'क' जब लेखक से मिलने आया तब वे उससे रूखा व्यवहार करते हैं। लेखक के घर पहुँचकर 'क' उनके गले मिलता है और उनसे मिलने की अत्यधिक खुशी प्रकट करता है। फिर वह उनसे 'ग' की बुरी तरह निंदा करने लगता है।

लेखक निंदा को मुख्य रूप से ईर्ष्या- द्वेष से प्रेरित मानता है। जब कोई व्यक्ति अकर्मण्य होने के कारण स्वयं उन्नति नहीं कर पाता तो वह दूसरे की उन्नति को देखकर उससे ईर्ष्या करने लगता है और उसकी निंदा करने लगता है।

VTM NSS COLLEGE LIBRARY

कुछ लोग तो चौबीसों घंटे निंदा करने में ही लगे रहते हैं। लेखक के अनुसार निंदक तीन प्रकार के होते हैं - मिशनरी निंदक, ईर्ष्या-द्वेष से प्रेरित निंदक और संघीय निंदक। मिशनरी निंदक बिना किसी कारण के ही किसी की भी निंदा कर सकते हैं। उनका किसी से बैर नहीं, द्वेष नहीं। वे किसी का बुरा नहीं सोचते। वे चौबीसों घंटे निंदा कर्म में लगे रहते हैं। वे इतने निष्पक्ष होते हैं कि प्रसंग आने पर वे अपने बाप की निंदा भी उसी तरह करते हैं जिस तरह अन्य लोगों की। इनके लिए निंदा 'टॉनिक' होती है। ईर्ष्यालु निंदक किसी की उन्नति पसंद न करने के कारण उसकी निंदा करते हैं। ऐसे निंदक बड़ा दुखी होता है और ईर्ष्या- द्वेष से चौबीसों घंटे जलता रहता है और निंदा का जल छिड़ककर कुछ शांति अनुभव करता है। इन्हें कोई दण्ड देने की ज़रूरत नहीं है क्यों कि वह स्वयं दण्डित होता है। संघ बनाकर निंदा करनेवाले जहाँ- तहाँ से खबरें लाते हैं और संघ के प्रधान को सौंपते हैं। प्रधान इस कच्चे माल को पक्का माल बनाकर संघ के सदस्यों को सौंपता है जिसका सर्वत्र प्रचार किया जाता है।

लेखक ने यह भी माना है कि कुछ लोग निंदा रूपी पूँजी से अपना लंबा-चौड़ा व्यापार फैला देते हैं। इस प्रकार के लोग दूसरों की कमियों को नमक- मिर्च लगाकर रोचक रूप में दूसरों के सामने वर्णन करके स्वयं को प्रतिष्ठित करना चाहते हैं। ऐसे लोग चापलूस किस्म के होते हैं। वे दूसरों की कमज़ोरी का लाभ उठाने केलिए उनके सामने उनके दुश्मनों की निंदा करके अपना लाभ उठा लेते हैं। 'क' ने भी लेखक के सामने उनके विरोधियों की निंदा करके उनकी सद्भावना प्राप्त कर ली थी।

लेखक निंदा न करने की प्रेरणा देते हैं क्यैंकि निंदा करनेवाले आत्महीनता के शिकार होते हैं। वे आलसी, अकर्मण्य, और झूठे बन जाते हैं। वे सदा दूसरों के दोष देखते रहते हैं। लोग उनका विश्वास नहीं करते। अच्छे लोग उन्हें अपने पास भी नहीं फटकने देते।

VTM NSS COLLEGE LIBRARY

गेहूँ बनाम गुलाब

रामवृक्ष बेनीपुरी

रामवृक्ष बेनीपुरी अनेक भाषाओं के अधिकारी विद्वान थे। उनके द्वारा रचित एक ललित निबंध है 'गेहूँ बनाम गुलाब'। इस निबंध के अंतर्गत लेखक ने गेहूँ को शारीरिक तृप्ति तथा गुलाब को मानसिक तृप्ति का प्रतीक माना है। इन दोनों का संतुलन ही मानव जीवन को पूर्णता प्रदान कर सकता है।

लेखक का कहना है कि मनुष्य जन्म लेने पर अपने साथ भूख को भी लेकर आता है। अपनी इस भूख- प्यास को मिटाने के लिए उसने प्रकृति के हर तत्व से भोजन जुटाने का प्रयास किया। जन्म से ही अपने साथ भूख लाने वाला यही मनुष्य आदिकाल से ही सौन्दर्य प्रेम भी कर रहा है। अपनी क्षुधा को शांत करने के लिए उसने जहाँ एक ओर कठिन परिश्रम किया, वहीं अपनी कोमल भावनाओं को भी नष्ट नहीं होने दिया। उसने अपनी इन कोमल भावनाओं का कुशलतापूर्वक पोषण किया। इस तरह गेहूँ और गुलाब, मतलब शरीर और मन की तुष्टि का सम-तुलन रहा।

अपनी भूख मिटाने के लिए जहाँ उसने पशुओं को मारकर उनका माँस खाया, वहीं अपने मनोरंजन और अपनी मानसिक शांति के लिए उन्हीं पशुओं की खाल से ढोल तथा सींग से तुरही भी बनाया। बाँस से लाठी बनाने के साथ- साथ बाँसुरी भी बनाई। इस तरह वह प्राचीन काल से ही गेहूँ अर्थात शारीरिक तुष्टि के साथ- साथ गुलाब अर्थात् मानसिक तुष्टि को भी महत्व देता चला आया । वह अपने चारों ओर दिखाई देनेवाले प्राकृतिक दृश्यों से मन का आनन्द प्राप्त करता रहा। मानव शरीर में पेट का स्थान नीचे है, हृदय का ऊपर और मस्तिष्क का सबसे ऊपर। यह उसके मन का पेट पर विजय का सूचक है।

मनुष्य गेहूँ खाता है और गुलाब सूँघता है। एक से उसका शरीर तृप्त होता है और दूसरे से उसका मन तृप्त होता है। मनुष्य ने जब से दो पैरो पर चलना सीखा, उसके मन ने गेहूँ अर्थात अपनी भूख पर काबू करने के प्रयास शुरू कर दिये। वह आदिकाल से ही उपवास एवं तपस्या करके गेहूँ पर विजय प्राप्त करने की चेष्टा

VTM NSS COLLEGE LIBRARY

कर रहा है। गेहूँ और गुलाब के संतुलन में ही सुख, शांति और शक्ति है, किन्तु आज यह संतुलन टूट रहा है। वर्तमान समय में गेहूँ घोर परिश्रम का प्रतीक बन गया है और गुलाब घोर विलासिता का। इसलिए सर्वत्र अशांति और हाहाकार मचा हुआ है। सभी जगह युद्ध और संकट के बादल मँडरा रहे हैं। यदि इसी प्रकार गुलाब और गेहूँ का यह संतुलन बिगड़ता गया तो सर्वनाश निश्चित है।

भौतिक समृद्धि से सुख की प्राप्ति कल्पना मात्र है। इससे मानव की स्थायी प्रगति नहीं हो सकती। इस वास्तविकता को भूलकर मानव इन सुख साधनों के पीछे दौड़ रहा है। परिणामस्वरूप मानवता के स्थान पर दानवता बढ़ रही है। भौतिकता में व्याप्त ये राक्षसी प्रवृत्तियाँ सबसे अधिक अहितकर है। इसलिए आज यह आवश्यक हो गया है कि ऐसे उपाय किए जाएँ जिससे व्यक्ति का मानसिक संस्कार हो अर्थात गेहूँ पर गुलाब की, शरीर पर मन की और भौतिकता पर साँस्कृतिकता की विजय हो। इसके लिए मनुष्य को अपनी मनोवृत्तियों को वश में करना चाहिए जिसके लिए आज का मनोविज्ञान दो उपाय बताता है - इन्द्रियों का संयमन तथा वृत्तियों को ऊर्ध्वगामी करना।

लेखक का कहना है कि गेहूँ की दुनिया अर्थात भौतिकता की स्थूल दुनिया नष्ट हो रही है। अब गुलाब की दुनिया अर्थात साँस्कृतिकता की दुनिया का आरंभ हो रहा है। वह दुनिया रंगों तथा सुगन्धों की दुनिया होगी और सारा मानव- जीवन रंगमय, सुगन्धमय, नृत्यमय, गीतमय बन जायेगा। इस युग को देखने के लिए आँखों पर पड़े गेहूँ का मोटा पर्दा हटाना होगा। लेखक का कहना है कि हम जो देखना चाहते हैं उसे अपने अंदर पैदा करना है। मतलब हमारे मन में जो कुछ भी है वहीं चारों ओर दिखाई देता है।

VTM NSS COLLEGE LIBRARY